ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol.-6* Issue-9* October- 2021
Innovation The Research Concept

भ्रमरगीत काव्य परंपरा का आधुनिक काव्यः उद्धव शतक

Modern Poetry of Bhramargeet Poetry Tradition: Uddhav Centenary

Paper Submission: 15/10/2021, Date of Acceptance: 23/10/2021, Date of Publication: 24/10//2021

एम.एल. गुर्जर
सह आचार्य एवं
विभागाध्यक्ष
हिन्दी विभाग,
स्व राजेश पायलट
राजकीय स्नातकोत्तर
महाविद्यालय, बॉदीकुई,
राजस्थान, भारत

सारांश / Abstract

सारांश रूप में हम कह सकते हैं कि जगन्नाथदास रत्नाकर द्वारा लिखित उद्धव शतक काव्य भ्रमरगीत काव्य परंपरा की एक महत्वपूर्ण कड़ी है। सूरदास और नंददास की परंपरा का अनुसरण करते हुए भी रत्नाकर ने इसे अलग ढंग से लिखा है । इस काव्य में एक अद्भुत गति और लय है और यही इस काव्य की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता है। इस काव्य मे भाव, भाषा और शैली का चमत्कारपूर्ण सामंजस्य है। इस कारण यह हिन्दी साहित्य की एक बेजोड़ कृति है

In summary we can say that the Uddhava Shataka poetry written by Jagannathdas Ratnakar is an important link in the Bhramar Geet poetry tradition. Ratnakar has written it differently, following the tradition of Surdas and Nandadas. It has a wonderful pace and rhythm in poetry and this is the most important feature of this poetry.

मुख्य शब्द भ्रमरगीत, रसावतार- श्रीकृष्ण, नागरी प्रचारिणी-सभा, प्रबंध, मुक्तक, श्रीमद्भागवद, प्रेमाश्रु , साहित्य-सुधानिधि, सगुणोपासना, षट्ऋतु , नंददास, सूरदास, भंवरगीत, परिनिष्ठित, उक्तिवैचित्र्य, चित्रोपम, मंगलाचरण, स्मृति, संवाद, रतनाष्टक, वीराष्टक, कलकाशी और बावनी ।

Bhramar Geet, Rasavatar- Shri Krishna, Nagari Pracharini-Sabha, Prabandha, Muktak, Shrimad Bhagavad, Premashru, Sahitya-Sudhanidhi, Sagunopasana, Shatrutu, Nanddas, Surdas, Bhanwar Geet, Parinnishit, Uktivaichitriya, Chittopam, Mangalacharana, Smriti, Vivakasi, Ratnashtak And bawani.

प्रस्तावना

भारतीय साहित्य और संस्कृति में रसावतार श्रीकृष्ण का महत्वपूर्ण स्थान है। हिन्दी साहित्य की अधिकतर महत्वपूर्ण रचनाओं के आधार श्रीकृष्ण ही हैं, विशेषकर हिन्दी साहित्य का मध्यकाल। हिन्दी का लगभग सम्पूर्ण मध्ययुगीन साहित्य ब्रजभाषा में है। हिन्दी साहित्य के मध्यकाल में यह भाषा चरमोत्कर्ष पर थी और इस भाषा का माधुर्य आकर्षित करनेवाला था। आधुनिककाल में ब्रजभाषा में रचना करने वाले अंतिम महान कवि जगन्नाथदास रत्नाकर थे और उद्धव-शतक उनकी सर्वश्रेष्ठ काव्यकृति है। बीसवीं सदी के इस प्रख्यात ब्रजभाषा साहित्यकार का जन्म काशी में सन 1866 ई. में हुआ था। यद्यपि इनके पूर्वजों का मूल निवास स्थान सफेदो (पानीपत) था और अकबर के शासनकाल में वहां से आकर दिल्ली बस गए थे तत्पश्चात बहुत दिनों तक मुगलकाल में सरकारी नौकरी के बाद, मुगलों के पतनकाल में लखनऊ आ गए थे और फिर लखनऊ से काशी आ गये। रत्नाकर के पिता पुरुषोत्तमदास महान साहित्यकार भारतेन्दु हरिश्चंद्र के समकालीन और उनके मित्र भी थे। वे स्वयं भी फारसी के अच्छे जानकार और हिन्दी के प्रेमी थे। इन्हीं का प्रभाव जगन्नाथदास रत्नाकर पर पड़ा। इसी वातावरण में रत्नाकर की प्रारंभिक शिक्षा हुई, तत्पश्चात उन्होंने फारसी से एम.ए करना चाहा पर वह अधूरा रहा। रत्नाकर जी ब्रज के अतिरिक्त उर्दू, संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, फारसी, मराठी, बंगला, पंजाबी और आयुर्वेद के मर्मज्ञ थे। वे अपने प्रारंभिक जीवन में "जकी" उपनाम से उर्दू और फारसी में कविताएं लिखते थे, बाद में वे ब्रज में कविताएं लिखने लगे। जगन्नाथदास रत्नाकर यद्यपि द्विवेदी युग के कवि थे परन्तु उनकी काव्य चेतना के विकास में भारतेन्दु मंडल के कवियों की परम्परा का पर्याप्त योगदान है। साहित्य के अतिरिक्त उनकी भारतीय धर्म, दर्शन और संस्कृति में गहरी रुचि थी। वे "नागरी प्रचारिणी सभा" के संस्थापक सदस्य थे और उन्होंने सन् 1922 में हिन्दी साहित्य सम्मेलन के कलकता अधिवेशन का सभापतित्व भी किया था। द्विवेदीयुगीन कवि होते हुए भी रत्नाकार जी निष्ठापूर्वक मध्यकालीन काव्यचेतना से अनुप्रेरित होकर ब्रज में ही काव्य रचना करते रहे और ब्रजभाषा काव्य परम्परा को महत्व देने के लिए उन्होंने प्रयाग में "रसिकमंडल" की स्थापना भी की थी । निष्कर्षतः वे एक विद्याव्यसनी, साहित्यममर्ज्ञ और कवि थे।

कृतित्व

जगन्नाथ दास रचनाकार बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे । वह रीतिकालीन काव्य परंपरा के अंतिम आधुनिककवि थे। उनके द्वारा रचित कव्यकृतियों के नाम इस प्रकार हैं।

1. हिंडोला- 100 रोला छंदो में रचित श्रृंगारपरक काव्य।
2. समालोचनादर्श - पोप द्वारा रचित "एसेज ऑन क्रिटिसिज्म" नामक अंग्रेजी ग्रंथ का रोला छंदबद्ध अनुवाद है।
3. हरिशचन्द्र- यह रत्नाकर जी की मौलिक एवं प्रथम काव्यकृति है। यह भारतेन्दु हरिशचन्द्र के सत्यहरिश्चन्द्र नाटक से प्रेरित होकर लिखा गया 8 सर्गो का खण्डकाव्य है।
4. कलकाशी- 142 रोला छन्दों में रचित प्रबंधात्मक काव्य, जिसमें काशी का वर्णन किया गया है।
5. श्रृंगारलहरी- 145 कवित सवैयों में रचित मुक्तक श्रेणी का काव्य।
6. रत्नाष्टक- 11 अष्टकों में रचित एक छोटा सा काव्यसंग्रह।
7. गंगालहरी- 52 कवितों में लिखित बाबनी ढंग की एक भक्तिपरक रचना।
8. विष्णुलहरी- यह भी 52 कवितो ंमे लिखित एक बावनी ढंग की रचना है।
9. वीराष्टक- 14 अष्टकों में रचित एक मुक्तक काव्य जिसमें वीरों और वीरांगनाओं का वर्णन है।
10. प्रकीर्णपद्यावली यह स्फुट छन्द संग्रह है।
11. गंगावतारण -
12. उद्धवशतक -

उद्धवशतक

यह रत्नाकर जी की सर्वश्रेष्ठ काव्यकृति है क्योंकि इस काव्य में उनकी काव्य कला का उत्कृष्ट रूप देखने को मिलता है । यह 118 कवित छन्दों में रचित कृष्णकाव्य है। इसका रचनाकाल 1929 ई. है। काव्यरूप की दृष्टि से यह प्रबंध और मुक्तक दोनों श्रेणियों में आता है। यह आधुनिक युग में रचित ब्रजभाषा की एक असाधारण काव्यात्मक उपलब्धि है। इस लेख का विषय यही काव्यकृति है। ब्रजभाषा का जितना मधुर और अभिव्यंजनापूर्ण प्रयोग उद्धव शतक में हुआ है, ऐसा अन्य किसी काव्य में नहीं।

उपर्युक्त रचनाओं के अतिरिक्त जगन्नाथदास रत्नाकर ने पाठसंशोधन, संपादन और टीका लेखन का कार्य भी किया। साहित्य-सुधानिधि एवं सरस्वती जैसी पत्रिकाओं के संपादन में उनका महत्वपूर्ण सहयोग था। बिहारी "सतसई" पर लिखी गई उनकी टीका "बिहारी-रत्नाकर" अपने आप में एक अद्भुत पुस्तक है। बिहारी सतसई को समझने के लिए इससे महत्वपूर्ण कोई अन्य पुस्तक नहीं है। उन्होंने अपने संपूर्ण काव्यग्रंथ ब्रजभाषा में ही लिखें। जगन्नाथदास रत्नाकर की समस्त काव्य रचनाएं नागरी प्रचारिणी सभा से दो भागों में प्रकाशित हो चुकी है।

अध्ययन का उद्देश्य

इस अध्ययन का उद्देश्य श्रीमदभागवद् में उल्लेखित संकेतित भ्रमरगीत प्रसंग की व्याख्या करते हुए उसकी परम्परा एवं महत्व को रेंखांकित करना है। विशेषकर हिन्दी साहित्य के मध्यकाल में वैष्णव कवियों के मध्य अतिप्रचारित इस प्रसंग को आधुनिक काल में, ब्रज भाषा में जगन्ननाथ दास रत्नाकर रचित उद्धव शतक से जोड कर इसकी परम्परा और इसके महात्म्य को स्पष्ट करना है। श्री रत्नाकर द्वारा लिखित उद्धव.शतक की मूल विषय वस्तु, भाषाशैली और इसमें प्रयुक्त ब्रजभाषा के लोकोक्ति और मुहावरों को स्पष्ट करना है।

भ्रमरगीत परंपरा और उद्धव शतक

उद्धव-गोपी संवाद, जिसे सामान्य रूप से भ्रमरगीत कहते हैं, का मूल स्रोत श्रीमद्भागवत है। यह भारतीय साहित्यिक परंपरा में अति प्रसिद्ध और प्राचीन रहा है। श्रीमद्भागवत के दशम स्कंध के 47वें अध्याय का 11 वां श्लोक इसका मूल है।

काचिन्मधुकरं दृष्ट्वा ध्यायन्ती कृष्णसंगमम्॥
प्रिय प्रस्थापितं दूतं कल्पयित्वेदमब्रवीत्॥

उपर्युक्त 11वें श्लोक के बाद 12 वे श्लोक से 21 वे श्लोक तक गोपी जो कुछ कहती हैं वह इतना स्पष्ट है कि मानो कोई भ्रमरगीत काव्य ही पढ़ रहे हो। श्रीमद्भागवत के इस आधार को लेकर के मध्यकाल के भक्त कवियों ने भ्रमरगीत नामक काव्यों की रचना की, जिसमे सूरदास और नंददास प्रमुख है।

सूरदास कृत भ्रमरगीत, सूरसागर का ही एक अंश है लेकिन यह एक स्वतंत्र काव्य भी है। भ्रमरगीत को हम इस प्रकार का काव्य मान सकते हैं जिससे उपालम्भ और दूतकाव्य का मिश्रण होता है। डॉ मैनेजर पांडे के शब्दों में सूरदास रचित भ्रमरगीत सूरदास के काव्य और कला की सिद्धावस्था है। सूरदास ने अपनी कृष्ण भक्ति और लेखनी के माध्यम से इस भ्रमरगीत काव्यपरंपरा को इतनी शक्ति और गति दी कि यह परंपरा जगन्नाथदास रत्नाकर तक गतिशील और विकासोन्मुख रही।

सूरदास के बाद उन्ही के समकालीन भक्तकवि नंददास ने इस काव्य परंपरा को "भंवरगीत" लिखकर आगे बढ़ाया। सूरदास श्री वल्लभाचार्य के शिष्य थे तो नंददास उनके पुत्र विट्ठलनाथ

जी के शिष्य थे। नंददास ने लगभग 16 ग्रन्थो की रचना की, जिसमें "भंवरगीत" प्रमुख है। नंददास ने भागवत एवं सूरकाव्य के प्राप्त उद्धव-गोपी-संवाद को अपने बौद्धिक चातुर्य से थोड़ा परिवर्तित रूप में प्रस्तुत किया। भंवरगीत सीधा उद्धव गोपी संवाद से शुरू होता है । इसमें दार्शनिक सिद्धांतों के निरुपण के अतिरिक्त ऐतिहासिक महापुरुषों एवं भक्तजनों का भी उल्लेख मिलता है। नंददास की भाषा ब्रज है परंतु उसमें नंददास का संस्कृतज्ञान भी झलकता है। जबकि सूर की भाषा शुद्ध ब्रज है। नंददास ने ब्रजभाषा को परिनिष्ठित बनाने का प्रयत्न किया । यद्यपि उनके "भंवरगीत" की भाषा सहज और सरल है उसमें छोटे छोटे शब्दों का प्रयोग किया गया है। उनके शब्द चयन के कारण ही साहित्यिक जगत में यह उक्ति प्रसिद्ध हो गई- "नंददास जड़िया और कवि गढ़िया"।

जगन्नाथदास रत्नाकर द्वारा इसी परंपरा में लिखित उद्धव शतक अपने आप में अनूठा है। गोपी-उद्धव-संवाद पर आधारित यह काव्य रचना 118 घनाक्षरी छंद में रचित है, जिसमें प्रथम छंद मंगलाचरण को लेकर है। उद्धव शतक की भाषा अत्यंत प्रभावशाली है। डॉ नगेंद्र के अनुसार कवि रत्नाकर जैसी अनूठी सूझ उक्तिवैचित्र्य और चित्रोपम शैली बहुत कम कवियों में मिलती है। प्रौढ और चित्रमय ब्रजभाषा के प्रयोग में रत्नाकर रीतिकाल के श्रेष्ठ कवियों के समकक्ष हैं।

यदि हम श्रीमद्भागवत, सूर कृत भ्रमरगीत और जगन्नाथ दास रत्नाकर विरचित उद्धव शतक की तुलना करे तो कुछ तथ्य उभरकर सामने आते हैं जो इस प्रकार हैं-

1. भागवतकार ने कहीं भी सगुण-निर्गुण में द्वंद एवं भक्ति और ज्ञान के विरोध को मान्यता नहीं दी, इसके विपरीत सूर ने अपने भ्रमरगीत में सगुणोपासना तथा ज्ञान पर भक्ति की विजय दिखाकर कृष्ण की लीलाभाव से संसिक्तरागरंजित प्रेमा भक्ति का चरमोत्कर्ष दिखलाया है। रत्नाकार ने भी अपने उद्धव शतक में सूरदास की उपर्युक्त भावना का ही अनुसरण किया है।

2. श्रीमद् भागवत में गोपी-उद्धव-संवाद के बीच कहीं से भ्रमर आकर मंडराने लगता है और उनके कालेपन के कारण गोपिया उसे कृष्ण का दूत मानकर उद्धव व भ्रमर में अभेद स्थापित करती हुई अपने उद्गार व्यक्त करने लगती हैं। सूरदास ने भागवत से लिए इस प्रसंग को इतना उत्कृष्ट और रससिक्त बना दिया कि आगे उद्धव गोपी संवाद को भ्रमरगीत के नाम से ही जाना जाने लगा। कवि नंददास ने तो सूर का अनुसरण किया परंतु रत्नाकर ने अपनी मौलिकता का परिचय दिया । रत्नाकर के "उद्धव शतक" में गोपियों सीधे उद्धव से बात करती है। पूरे उद्धव शतक में एक बार भी मधुकर या भ्रमर नाम नहीं आता।

3. भागवत के उद्धव-गोपी-संवाद में कुब्जा का नाम नहीं आता है किंतु सूर में कुब्जा और उसके कुबड को लक्ष्य बनाकर बिरहजनित मनोभावों की अभिव्यक्ति की है और रत्नाकर ने भी सूर का अनुसरण किया है । उद्धव शतक में 13 बार गोपियॉ कुब्जा का नामोल्लेख कर अपनी विरह वेदना को व्यक्त करती है ।

4. भागवत में राधा का प्रत्यक्ष रुप से उल्लेख नहीं मिलता है किंतु सूरदास ने भ्रमरगीत में राधाभाव को पर्याप्त प्रतिष्ठा दी और उद्धव शतक में जगन्नाथदास रत्नाकर ने सूर से भी आगे बढ़कर राधाभाव को चरमोत्कर्ष पर पहुंचा दिया। उद्धव शतक की शुरुआत ही राधा द्वारा स्पर्शित कमल पुष्प को सूंघने और राधा की स्मृति में कृष्ण के बेहोश होने से होती है। कृष्ण को स्मृति भी जब आती है जब कीर राधा शब्द का उच्चारण करता है। प्रो नंदकिशोर नवल भी लिखते हैं कि भागवत में राधा नाम का स्पष्ट उल्लेख नहीं है सिर्फ एक दो स्थान पर ऐसी गोपिका का उल्लेख है जो कृष्ण की प्रेयसी थी। डॉ शशिभूषणदास गुप्ता जिन्होंने "राधा की संकल्पना के विकास" पर शोध कार्य किया का कहना है कि राधा का स्पष्ट उल्लेख हाल रचित गाथासप्तसईं की एक कथा में मिलता है।

5. कृष्ण भक्ति काव्य परंपरा में उद्धव गोपी संवाद मुक्तक और प्रबन्ध दोनों काव्य रूपों में मिलता है। रत्नाकार द्वारा रचित उद्धव शतक मुक्तक भी है और प्रबंध भी।

सारांश रूप में हम कह सकते हैं कि भ्रमरगीत परम्परा अति प्राचिन है और इसमें सूरदास एक प्रमुख पडाव हैं और उद्धव शतक पर आकर यह कथा चरमोत्कर्ष पर पहुंचती है।

उद्धव शतक का काव्य सौंदर्य

जगन्नाथदास रत्नाकर द्वारा लिखित उद्धव शतक भ्रमरगीत काव्य परंपरा का काव्य होते हुए भी अन्य भ्रमरगीत काव्यों से अनूठा है। यह श्लेषचमत्कारयुक्त एवं अनुप्रास शैली में रचित एक सुगंठित और प्रौढ काव्य है। इस काव्य की शुरूआत मंगलाचरण से होती है लेकिन कथा की शुरुआत राधाभाव की प्रतिष्ठा से साथ होती है। कृष्ण एक दिन जमुना में उद्धव के साथ स्नान कर रहे होते हैं तो राधा द्वारा स्पर्शित कमल को छू कर बेहोश हो जाते हैं और कीर के मुख से राधा नाम सुनकर होश में आते हैं।

न्हात जमुना मैं जलजात एक देख्यौ जात
जाकौ अध-ऊरध अधिक मुरझायौ है।

.....

.....

पाए घरी द्वैक मैं जगाइ ल्याइ ऊधौ तीर
राधा-नाम कीर जब औचक सुनायौ है।

इससे आगे 10 कवितों में कवि राधा और ब्रज के विरह से उत्पन्न कृष्ण की विरहावस्था का वर्णन करता है। ऐसा लगता है मानो कृष्ण जमुना में न नहाकर प्रेम की नदी में नहाकर करके आए हैं और अपनी विरह व्यथा को वे जब उद्धव से कहने लगते हैं तो कह नहीं पाते और उनकी स्थिति यह हो जाती है-

नैकु कही बैननि, अनेक कहीं नैननि सौं,
रही-सही सोऊ कहि दिनी हिचकिनी सौं॥

कृष्ण, वासुदेव और देवकी से भी बढ़कर ब्रज की यादों को बताते हैं और रुपक में कहते हैं कि वासुदेव और देवकी की चाहरुपी चिमटी से खींचने पर भी ब्रज की स्मृति रूपी कांटा निकलने का तो प्रश्न ही नहीं, खिसकता ही नहीं है-

परम गहीली बसुदेव देवकी की मिली
चाह-चिमटी हू सौं न खैचों खसकत है।

ग्वालो और गोपियों के साथ गोकुल में बिताए गए अपने समय को याद करते हुए और उनके द्वारा दिए गोपाल नाम के सामने कृष्ण को तीन लोकों की ठुकराई भी अच्छी नहीं लगती है-

प्यारौ नाम गोबिंद गुपाल को ।विहाय हाय
ठाकुर त्रिलोक के कहाई करिहै कहा॥

कृष्ण स्पष्ट रूप से उद्धव से कहते हैं कि ब्रज के धूलिकण के सामने तीनो लोको का सुख वैभव भी तुच्छ है। राधा के प्रति तो कृष्ण का प्रेम आगाध है और उसे राधा के चंद्रमुख की यादें आती हैं-

रधा-मुख-मंजुल-सुधाकर के ध्यान ही सौं
प्रेम - रत्नाकर हियै यौ उमगत है॥

इस प्रकार कृष्ण की प्रेम भरी कातरता को देखकर उद्धव एकदम आवक् हो गए और वे कृष्ण को समझाने लगे। उद्धव की बातों को सुनकर कृष्ण कहते हैं कि मेरी आंखों में ब्रज की स्मृति में जो प्रेमाश्रु निकल रहे है उनको रोकने के लिए तुम ज्ञान की बाधा उपस्थित मत करो और इस ब्रह्मज्ञान की शिक्षा को तुम गोपियों को दो तो श्रेष्ठ रहेगा। यदि तुम इस ब्रह्मज्ञान को गोपियों को समझाने में सफल रहते हो तो मैं भी तुम्हारे ज्ञान को हृदय में धारण कर लूंगा । कवि कहते हैं कि उद्धव के ब्रज की ओर रवाना होते ही कृष्ण का हृदय भी उद्धव के साथ जाने की अभिलाषाओं से भर गया। उद्धव आपने ज्ञान के भंडार और कृष्ण के संदेश को लेकर ज्यो ही ब्रज की ओर चले तो उनका ज्ञान का अभिमान रास्ते में ही खुल गया और ब्रज की सीमा में प्रवेश करते ही उद्धव की यह स्थिति हो गई-

हरैं हरैं ज्ञान के गुमान घटि जानि लगे।
जोग के विधान ध्यान हूँ तो टरिबै लगे।

....

गोकुल के गॉव की गली में पग पारत हीं
भूमि कै प्रभाव भाव और भरिबै लगे॥

ब्रज की सीमा में पहुंचते ही उद्धव ने महसूस किया कि "जानै कौन बहती बयार बरसाने" में और जब गोपियों ने उससे पूछा कि "हमको लिख्यो है कहां, हमको लिख्यौ है कहां" तो उद्धव की चतुराई जाती रहीं, फिर भी उन्होंने अपना उपदेश गोपियों को देना शुरू किया और कहने लगे कि पांचों तत्वों की सत्ता को हम तुम उनमें समान ही समोई हैं । अतः गोपियों तुम "छीन करो तन, को न दीन करौ मन कौ"। उद्धव की इस अकथ कहानी को सुनकर गोपियों की स्थिति विचित्र हो गई और अपने हृदय को थामकर सोचने लगी कि "हयां तो विषमज्वर

वियोग की चढ़ाई यह पाती कौन रोग की पठावत दवाई है"। गोपियां आगे कहती हैं कि आप कृष्ण दूत बनकर आये हो या ब्रह्मदूत बनकर आए हो । हे उद्धव तुने हमारी यह स्थिति कर दी-

छेदि छेदि छाती छालनी कै बैन बनानि सौ
तामै पुनि ताइ धीर-नीर धरिवौ कहौ॥

इसी क्रम में गोपिया कुबडी (कुब्जा) का भी उल्लेख करती है। वह कहती है कि हम प्रत्यक्ष में प्रमाण की आवश्यकता नहीं समझती चाहे तुम लाख बार कहो, यह सच है कि तुम्हारा यह उपदेश कुब्जा के द्वारा तुमको पढाया गया है। अपने तर्क को आगे बढाते हूए गोपियाँ कहती है कि विरह व्यथा से पीड़ित व्यक्ति (भोगी) योगी से बढ़कर बताती हैं-

वै तौ बस बसन रंगावै मन रंगत ये
भसम रमावै वे ये आपुही भसम है।

.....
....
करिकै विचार ऊधौ सूधौ मन माहि लखौ।
जोगी सौ वियोग भोग भोगी कहा कम है। ।

अपने तर्क को आगे बढ़ाती हुई गोपियां कहती है कि तुम खुद सोए हुए हो अतः यह संसार तुम्हें स्वप्न की तरह दिखाई देता है । आगे नीति की बात करती हुई गोपियां कहती है कि यदि ये सुख के दिन नहीं रहे तो ये दुख के दिन भी नहीं रहेंगे और समय के साथ सब चीजें खत्म हो जाएंगी केवल बातें ही रह जाएंगी-

कहै रतनाकर न सुख के रहै जो दिन
तौ दुख द्वन्द्व की न रातै रहि जाइगीं॥
घातै रहि जाइँगी न कान्ह की कृपा तै इती।
ऊधौ कहिबे कौ बस बातै रहि जाइँगी॥

और अंत में झुझलाकर गोपियां उद्धव से कहती है कि यह सारे उपदेश जो तुम हमसे कह रहे हो यह सब कुब्जा की पढ़ाई हुई कविता है। यदि तुम हमारी दृष्टि से देख लेते हो तो तुम्हारा सारा भ्रम चला जाता है । गोपियों को कृष्ण पर अखंड विश्वास है इसी कारण वे उद्धव से कहती है कि तुम कृष्ण के नाम को यो ही बदनाम कर रहे हो।

रसिक सिरौमनि कौ नाम बदनाम करौ
मेरी जान ऊधौ कू कूबरी पठाए हो॥

गोपियां रूपक में अपनी बात उद्धव को समझाती है और कहती है कि पहले तो अक्रूरजी आकर हमारे मूलधन श्रीकृष्ण को ले गए और अब तुम योग की शिक्षा लेकर प्राण रूपी ब्याज वसूलने आए हो-

लै गयौ अक्रूर क्रूर तब सुख मूर कान्ह
आए तुम आज प्रान ब्याज उगहन कौ॥

उद्धव शतक में रत्नाकर ने प्रकृति का मनोहारी चित्रण किया है उन्होंने अपने इस छोटे से काव्य में षट्ऋतुवर्णन की परंपरा का भी निर्वहन किया है। बसंत ऋतु से इसकी शुरुआत करके शिशिर ऋतु तक इसे लेकर गए हैं और बसंत ऋतु की स्थिति का वर्णन करते हुए कवि कहते है कि

बिकसित बिपिन बसंतिकावली कौ रंग
लखियत गोपिन के अंग पियराने मै ॥-

इससे आगे ग्रीष्म में सूर्य के वृष राशि पर आ जाने के कारण जीवन किस तरह जल उठा है, इसका वर्णन भी गोपिया अपने कथन में करती है। गोपिया आगे कहती है कि वर्षा ऋतु में विरह व्यथा से हमारे हृदय के घाव हरे हो रहे हैं और बिना घनश्याम के ही ब्रज मंडल में बरसात होती रही है।

बिनु धनष्याम धाम-धाम ब्रज मंडल मै
ऊधौ नित बसति बहार बरसा की है॥

षटऋतु वर्णन को आगे बढ़ाते हुए कवि लिखते हैं कि शरद में काम की प्रबलता है तो हेमंत में ऐसा लगता है कि ब्रज में 6 ऋतु न होकर मानो केवल हेमंत ऋतु है-

षट ऋतु है है कहू अनत दिगंतनि मै
इत तौ हिमंत कौ निरंतर पसारौ है।

और शिशिर ऋतु में तो गोपियां का हृदय कांप उठता है और गोपियां बार-बार अपने हृदय को हथेलियों से दबाती हैं।

तत्पश्चात् पॉच कवित्तों में उद्धव के ब्रज से विदा होने पर ब्रज वासियों की मार्मिक स्थिति का वर्णन है । कृष्ण को भेंट के लिए हर बृजवासी कुछ ना कुछ लेकर आया है। नंद पीला वस्त्र, यशोदा ने ताजा मक्खन तो राधा ने सुमधुर स्वर वाली बांसुरी दे दी और ब्रजवासियों की स्थिति यह हो गई -

कोऊ जोरि हाथ कोऊ नाइ नम्रता सौं माथ
भाषन की लाख लालसा सौं नहि जात हैं।

और गोपियां तो पत्र भी नहीं लिख पाती-

सुखि जाति स्याहि लेखिनी कै नै कु डंक लागै
अंक लागै कागद बररि बरि जात है।

और अंत में गोपियों के एकनिष्ठ प्रेम को देखकर उद्धव अपना ज्ञान-योग भूल गए व उनका अहंकार नष्ट हो गया । मथुरा जाते समय उद्धव के पैर उठाने पर भी नहीं उठ रहे हैं और उद्धव रथ से उतर कर ब्रजभूमि में लौटने लगे-

रथ तै उतरि पथ पावन जहां ही तहॉ
बिकल बिसुरे धूरि लोटन लगत है।

कवि रत्नाकर कहते हैं कि ब्रज के पथ की धूल और प्रेम का उपहार लेकर मथुरा लौटते वक्त उद्धव की आंखों में आंसू भर आया और लज्जा से उनके नेत्र झुके हुए थे। उद्धव निर्गुण ज्ञान के विराट रूप तंबू में प्रेम का सुंदर जल रूपी रस भर कर लाए यहां तक ही नहीं, प्रेम रूपी मंदिरा से मस्त होने के कारण उद्धव के पैर डगमगा रहे थे।

प्रेम मद छाके पग परत कहां के कहां
थाके अंग नैननि सिथिलता सुहाई है।
कहै रतनाकर यौ आवत चकात ऊधौ
मानौ सुधियात कोऊ भावना भुलाई है।

उद्धव के मथुरा आने पर श्रीकृष्ण को ब्रज स्थिति जानने की अति उक्सुकता है और श्री कृष्ण की उक्त भावना को शांत करने करते हुए उद्धव कहते हैं कि हे नाथ पहले मेरे व्यथित हृदय को शांत हो जाने दीजिए और फिर उद्धव कहने लगे ब्रज के वियोग जनित कष्टों को देखकर मेरी सारी चतुराई चली गई और राधा के गांव बरसाने की तो यह स्थिति है जब वहां बरसात होती है मानो ज्वालामुखी से लावा गिर रहा हो। अंत में उद्धव श्री कृष्ण के सामने स्वीकार करते हैं कि मैं स्वयं ज्ञान-योग को छोड़कर प्रेमाविष्ट हो गया और मेरे ज्ञान का अहंकार वहीं गिर गया। गोपियों का प्रेम-प्रवाह, मेरा उस तरह पीछा कर रहा है जिस तरह राजा भागीरथ का गंगा ने पीछा किया था-

"आयो भज्यों भूपति भागीरथ लौ हौ तौ नाथ साथ लग्यो सोई पुण्य पाथ बढ़्यो आवे है "

इससे आगे उद्धव श्री कृष्ण से ब्रज जाने की विनय करते हैं और कहते है कि यदि आप से मुझे ब्रज के लोगों का संदेश नहीं कहना होता तो मैं ब्रज में ही कुटिया बनाकर रहने लग जाता। अंत में कवि कहते हैं गोपियों के प्रेम-प्रवाह से उद्धव, गोपी और कृष्ण के मध्य दूत बनकर श्री कृष्ण के हृदय में प्रेम की लौ जगाने का सफल प्रयास कर रहे हैं और स्वयं गोपियों के कृष्ण-प्रेम में तप कर वे सूर्यकांत मणि हो गए-

गोपी ताप तरुण करनी किरनावली के
उद्धव नितांत कांत मनि बनि आए है॥

उद्धव शतक का शिल्प पक्ष

शिल्प की दृष्टि से यदि हम उद्धव शतक का मूल्यांकन करें तो पाते हैं कि इस काव्य की भाषा परिनिष्ठित ब्रज है और वह अत्यन्त गतिशील और प्रभावपूर्ण है। असल में रचनाकार के समक्ष सूरदास, नंददास, बिहारी, पद्माकर और सेनापति आदि कवियों द्वारा प्रयुक्त भाषा का स्वरूप था, जो एक तरह से उनके लिए चुनौती था। दूसरी और जिस समय में उन्होंने उद्धव शतक की रचना थी उस समय खड़ी बोली का आरंभ हो चुका था। उन्होंने उद्धवशतक में अभिव्यंजना शक्ति का प्रयोग किया, इसी कारण कम शब्दों में गहरी और प्रभावपूर्ण अभिव्यक्ति कर सके । जैसे उद्धव के आने पर गोपियां का उसे बार-बार यह पूछना "हमको लिखियो है कहां ,हमको लिखो है कहा,ं हमको लिखो कहां है ं कहने सब लगी" इस पंक्ति में हमको लिखियो का कहा पद तीन बार आया है और शास्त्रीय दृष्टि से यह एक दोष है, किंतु यह दोष इस पंक्ति की ताकत भी है। इसी से कृष्ण के प्रति गोपियों का अनंत प्रेम प्रकट होता है। इसके अतिरिक्त रत्नाकर ने अपने इस काव्य में ऐसे शब्दो का प्रयोग किया है जिससे उसे पूरे छंद में चमत्कार उत्पन्न हो जाता है जैसे-

चेरी है न ऊधौ काहू के बबा की हम
सुधौ कहि देति एक कान्ह की कमेरी है।

इस पंक्ति में 'बबा' शब्द का प्रयोग बड़ा व्यंजक है। इसका अर्थ है कि गोपियां कृष्ण के सामने ब्रह्म को कुछ नहीं समझती। उद्धव शतक में कहीं-कहीं अवधि शब्दों का भी प्रयोग किया जैसे

झमेला। इसके अतिरिक्त रत्नाकर अपनी काव्य भाषा की अभिव्यंजना शक्ति को बढ़ाने के लिए लोकोक्ति और मुहावरो का कौशलपूर्ण प्रयोग भी किया है जैसे-

तीन गुण पाँच तत्व बहकि बतावत सौ
जैहै तीन तेरह तिहारी तीन पॉच मै॥

उपयुक्त पंक्ति में तीन तेरह और तीन पॉच जैसे लौकिक शब्दों का प्रयोग बहुत सार्थक है। सारांश रूप में यह कह सकते हैं कि उद्धव शतक की भाषा की प्रमुख विशेषता इसकी गति और लय में है। अलंकारों की दृष्टि से हम देखते हैं तो पाते हैं कि इस काव्य के में प्रत्येक छंद में अनुप्रास और श्लेष की छटा देखने को मिलती है और अनुप्रास के प्रयोग नें तो इस काव्य में चमतकार प्रवाहपूर्णता ला दी है जैसे-

पुलकि पसीजि पास चॉपि मुरझाने कॉपि
जानै कौन बहति बयार बरसाने मै॥

इसी तरह श्लेष अलंकार के प्रयोग से यह काव्य कृति भरी पड़ी है और श्लेष का प्रयोग इस तरह से किया है कि उससे कविता का प्रभाव और सहजता आहत नहीं हुई है जैसे-

एक ही अनंग सधि साध सब पूरी अब
और अंगरहित अराधि करि है कहा॥

कवि रत्नाकर ने अपनी इस काव्य कृति में अपने नाम तक में श्लेष अलंकार का सुंदर प्रयोग किया है-

जोग रत्नाकर मै सांस घुँटि बुड़ै कौन।
प्रेम-रत्नाकर गम्भिर परे मीननि कौ।
प्रेम रत्नाकर की तरल तरंग परि।

उपर्युक्त काक्य पंक्तियों में रत्नाकर शब्द का प्रयोग संबंध और कवि दोनों के लिए हुआ है अनुप्रास और श्लेष के साथ कवि रत्नाकर ने रूपक अलंकार का प्रयोग भी व्यापक स्तर पर किया है । एक पद में अनेक अलंकारों का प्रयोग भी बड़ी कुशलता से इस काव्य पंक्ति में हुआ है

परम गहीली बसुदेव देवकी की मिली
चह-चिमटी हँ न खैचो खसकत है।
बढत न क्यो हँ हाय विधेक उपाय सबै
धीक आक छीर हूँ न धारै धसकत है।

उपर्युक्त अलंकारों के अतिरिक्त उद्धव शतक में विभावना, लोकोक्ति और अत्युक्ति आदि अनेक अलंकारों का भी प्रयोग हुआ है।

छंद विधान की दृष्टि से उद्धवशतक में केवल घणाछरी या कवित छंद का प्रयोग हुआ है। यह छंद मुक्तक काव्य के लिए उपयुक्त माना जाता है और रीतिकाल में भी धनानंद, देव, मतिराम और भूषण आदि कवियों ने अपने काव्य में इस छंद का प्रयोग किया है। इस छंद के प्रत्येक चरण में 31 वर्ण होते हैं और अंतिम चरण प्राय गुरु होता है। उद्धवशतक विप्रलम्भ श्रृंगार परक काव्य है और इस काव्य में कवित छंद का बखूबी प्रयोग हुआ है। काव्यरूपी की दृष्टि से देखें तो उद्धव शतक मुक्तक भी है और प्रबंध भी, इसमें कवित्तें ं के माध्यम से कथा श्रृंखला की कड़ियां परस्पर संबंध करके इस तरह प्रस्तुत की है कि जिसके कारण इसे मुक्तक प्रबंध श्रेणी का काव्य कहा जा सकता है।

निष्कर्ष

छंद विधान की दृष्टि से उद्धवशतक में केवल घणाछरी या कवित छंद का प्रयोग हुआ है। यह छंद मुक्तक काव्य के लिए उपयुक्त माना जाता है और रीतिकाल में भी धनानंद, देव, मतिराम और भूषण आदि कवियों ने अपने काव्य में इस छंद का प्रयोग किया है। इस छंद के प्रत्येक चरण में 31 वर्ण होते हैं और अंतिम चरण प्राय गुरु होता है। उद्धवशतक विप्रलम्भ श्रृंगार परक काव्य है और इस काव्य में कवित छंद का बखूबी प्रयोग हुआ है। काव्यरूपी की दृष्टि से देखें तो उद्धव शतक मुक्तक भी है और प्रबंध भी, इसमें कवित्तें ं के माध्यम से कथा श्रृंखला की कड़ियां परस्पर संबंध करके इस तरह प्रस्तुत की है कि जिसके कारण इसे मुक्तक प्रबंध श्रेणी का काव्य कहा जा सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *उद्धव शतक - जगन्नाथदास रत्नाकर*
2. *भ्रमरगीतसार - रामचंद्र शुक्ल*
3. *मध्यकालीन काव्य- डॉ. मनमोहन सहगल*
4. *हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ नगेन्द्र*
5. *सूरदास- नंदकिशोर नवल*
6. *भक्ति आंदोलन और सूरदास का काव्य- मैनेजर पांडे*
7. *उद्धव शतक -डॉ. गोविंद नारायण शर्मा*
8. *हिन्दी साहित्य कोश -भाग 2 नामवाची शब्दावली , डॉ धीरेंद्र वर्मा*